रूसो की जीवनी और कार्य
(Biography and Works of Rousseau)

रूसो का जन्म स्विट्जरलैण्ड के जैनेवा नगर में 1712 में हुआ था। इनके जन्म के कुछ दिन बाद ही इनकी माता की मृत्यु हो गई, इसलिए इनकी देखभाल इनके पिता और चाची ने की। रूसो के पिता एक साधारण घड़ीसाज थे और बड़ी मनमौजी प्रकृति के व्यक्ति थे। रूसो से वे प्रेम तो करते थे पर इनकी उचित देखभाल नहीं कर सके। अपनी प्रारम्भिक शिक्षा रूसो ने अपने पिता से प्राप्त की थी और 6 वर्ष की आयु में उपन्यास पढ़ने लगे थे। अब इन्हें स्कूल भेजा गया, पर वहाँ के कृत्रिम पर्यावरण और दण्ड व्यवस्था का इन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा और ये स्कूल से भाग खड़े हुए। इन्होंने अपने घर पर ही इतिहास एवं धार्मिक पुस्तकें पढ़ना प्रारम्भ किया। पढ़ने से जब इनका मन ऊबता था तो ये अपने नगर के प्राकृतिक दृश्यों का अवलोकन किया करते थे। दस वर्ष की आयु तक इनका यही कार्यक्रम रहा। जैनेवा के प्राकृतिक वातावरण का इन पर गहरा प्रभाव पड़ा जो आगे चलकर इनके चिन्तन एवं लेखन में प्रस्फुटित हुआ। 10 वर्ष की आयु पर इन्हें एक शिक्षक के घर भेजकर पुनः पढ़ाने का प्रयत्न किया गया लेकिन यहाँ भी इनका मन अधिक दिन नहीं लगा।

जब रूसो केवल 12 वर्ष के थे इन्होंने एक शिल्पी के यहाँ कार्य करना प्रारम्भ किया। इस व्यवसायी का व्यवहार अच्छा नहीं था अतः रूसो ने कुछ दिन बाद ही उसके यहाँ जाना छोड़ दिया। अब रूसो के पास कोई कार्य नहीं था। ये आवारों की तरह इधर-उधर घूमा करते थे। इस समय इनके हृदय में प्रकृति प्रेम की नींव और गहरी हो गई। संवेदनशील इस किशोर पर दीन-दुःखी मानवों के जीवन का भी प्रभाव पड़ा और ये इनके दुःखों को दूर करने की सोचने लगे। अपना जीवन चलाने के लिए ये छोटे-मोटे शिल्प कार्य भी करते रहे। 21 वर्ष की आयु तक इन्होंने अपना जीवन इसी प्रकार बिताया। इसी समय समाज ने इन पर झूठे आरोप लगाए और इन्हें कठोर दण्ड दिया। इससे समाज के प्रति इनकी आत्मा विद्रोह कर उठी। अपने देश की सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक एवं राजनैतिक स्थिति से भी रूसो को बड़ी घृणा थी। परन्तु विवशता थी, साधनहीन होने के कारण ये अन्दर ही अन्दर घुटकर रह जाते थे। 25 वर्ष की आयु होने पर इन्होंने अपनी मातृभूमि को छोड़ दिया और फ्रांस चले गए। यहाँ से इनके जीवन का दूसरा अध्याय प्रारम्भ होता है।

फ्रांस में रूसो ने साहित्य और विज्ञान का अध्ययन आरम्भ किया और पढ़ने के समय में इन्होंने प्लेटो, हॉब्स, लॉक, मॉन्टेन, फेनेलन, वाल्टेयर, मेलब्रैन्की, डेकार्टे, लाइबनीज तथा न्यूटन आदि के ग्रन्थ पढ़ डाले। प्लेटो की 'रिपब्लिक' और डीफो के 'राबिन्स क्रूसो' से ये अत्यधिक प्रभावित हुए। लॉक के शिक्षा सम्बन्धी विचारों का भी इन पर अमिट प्रभाव पड़ा। अब ये लेखक और शिक्षक बनने की बात सोचने लगे। 1741 में इन्होंने दो बालकों को पढ़ाना शुरू किया लेकिन कुछ दिन बाद इन्होंने यह कार्य भी छोड़ दिया।

पर्यटन में रूसो की रुचि बराबर रही। इन्होंने फ्रांस के विभिन्न भागों का भ्रमण किया और वहाँ की सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक और राजनैतिक स्थिति का अध्ययन किया। फ्रांस के कष्टमय कृषक जीवन का इनके हृदय पर बड़ा प्रभाव पड़ा। अपने स्वयं के जीवन एवं सामाजिक व्यवहार से ये सन्तप्त थे ही, परिणामतः इनकी लेखनी चलने लगी; पर इस समय इनके लेख प्रकाश में न आ सके। 1744 में इन्होंने अपनी दासी से विवाह सम्बन्ध कर लिया और उसके सहयोग से जीवन की विभीषिका से लड़ते रहे। अपनी जीविका चलाने के लिए इन्होंने अनेक कार्य किए पर किसी में भी सफल नहीं हुए । 1750 में इनकी रचनाएँ प्रकाश में आने लगीं। 'द प्रोग्रेस ऑफ आर्ट एण्ड साइन्स' (The Progress of Art and Science) इनकी पहली रचना थी। इस वर्ष इन्हें अपने निबन्ध 'डिसकोर्स ऑन दी साइन्सेज एण्ड आर्ट्स' (Discourse on the Sciences and Arts) पर पुरस्कार मिला। 1754 में इनका एक निबन्ध 'सोशल इनइक्वैलिटी' (Social Inequality) प्रकाशित हुआ। इससे इन्हें चारों ओर प्रसिद्धि मिली। इसके बाद इनकी दो और रचनाएँ प्रकाशित हुईं 'डिस्कोर्स ऑन पौलिटिकल इकोनामी' (Discourse on Political Economy) और 'द ओरिजिन ऑफ इनइक्वैलिटी अमंग मैन' (The Origin of Inequality Among Man)। 1755 में इन्हें अपनी पुस्तक 'दी ओरिजिन ऑफ इनइक्वैलिटी अमंग मैन' पर पुरस्कार मिला। इससे इनकी ख्याति और बढ़ी। इस ख्याति से इन्हें बड़ा सन्तोष हुआ और अब ये चिन्तन और लेखन में ही मस्त रहने लगे। इस बीच इनकी अनेक रचनाएँ प्रकाशित हुईं और इनकी ख्याति और बढ़ी। 1761 में इन्होंने 'द न्यू हेलॉयज' (The New Heloise) लिखी। इस पुस्तक में रूसो ने गृह शिक्षा पर प्रकाश डाला है और अपने बच्चों की शिक्षा के प्रति माता-पिता की भूमिका स्पष्ट की है। 1762 में इन्होंने समाज को दो बड़े ग्रन्थ और दिए— एक 'सोशल कान्ट्रेक्ट' (Social Contract) और दूसरा 'एमिल' (Emile)। सोशल कान्ट्रेक्ट में रूसो ने अपने सामाजिक एवं राजनैतिक विचार प्रकट किए हैं। इस पुस्तक में इन्होंने एकतन्त्र एवं कुलीनतन्त्र के स्थान पर लोकतन्त्र की श्रेष्ठता स्थापित की है। रूसो के इन विचारों ने आगे चलकर 1789 में फ्रांस की इतिहास प्रसिद्ध क्रान्ति को जन्म दिया। रूसो फ्रांस की 1789 की क्रान्ति के अग्रदूत और आधुनिक लोकतंत्र के जनक माने जाते हैं।

एमिल रूसो की दूसरी क्रान्तिकारी रचना है। इसमें इनके शिक्षा सम्बन्धी विचार बड़े व्यवस्थित रूप से प्रकट हुए हैं। इसमें इन्होंने शिक्षा के अर्थ, उद्देश्य, पाठ्यचर्या, शिक्षण विधियों, अनुशासन और सहशिक्षा पर व्यवस्थित एवं विस्तृत रूप से लिखा है। एमिल उपन्यास शैली में लिखी गई है। इसमें पाँच अध्याय हैं। पहले चार अध्यायों में एक काल्पनिक बालक (नायक) की शैशव, बाल्य, किशोर और प्रौढ़ आयु पर शिक्षा का वर्णन किया गया है और पाँचवें अध्याय में उसकी भावी पत्नी सोफिया (नायिका) की शिक्षा का वर्णन किया गया है। शिक्षा के क्षेत्र में यह एक

आद्वताय पुस्तक मानी जाती है। विद्वान इसे शिक्षा सम्बन्धी शोध ग्रन्थ (Treatise of Education) कहते हैं। परन्तु राजनैतिक लोगों की दृष्टि में यह उस समय धर्म विरोधी पुस्तक मानी गई। इसकी बड़ी आलोचना हुई। चर्च एवं राज्य ने भी इसका बड़ा विरोध किया और इसकी प्रतियाँ जला देने की आज्ञा प्रसारित की गई। इसी समय फ्रांस सरकार ने रूसो पर अनेक दोष लगाकर इन्हें कारावास की सजा दी। 1766 में इन्हें फ्रांस से निकाल दिया गया। तब ये इंग्लैण्ड चले गए।

इंग्लैण्ड में रूसो ने अपने जीवन के चार वर्ष व्यतीत किए। लेखन कार्य ये यहाँ भी करते रहे। अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'कन्फेशन्स' (Confessions) का प्रथम भाग इन्होंने इंग्लैण्ड में ही लिखा था। 1770 में ये पैरिस लौटे। यहाँ इन्होंने अपने जीवन के अन्तिम वर्ष बिताए और 'कन्फेशन्स' का द्वितीय भाग लिखा। इस पुस्तक में रूसो ने अपने जीवन की घटनाओं, विशेषकर भूलों को उजागर किया है, उन्हें स्वीकार किया है और मनुष्यों को उनसे बचने की सलाह दी है। पर अफसोस! इतनी अपूर्व ख्याति और जन कल्याण के बावजूद रूसो का अन्तिम समय उनके प्रारम्भिक जीवन से भी अधिक कष्टों के बीच व्यतीत हुआ। 1778 में इस क्रान्तिकारी युग पुरुष की ऐहिक लीला समाप्त हो गई।

रूसो का दार्शनिक चिन्तन
(Philosophical Thoughts of Rousseau)

प्रत्येक विचारक की अपनी एक दार्शनिक विचारधारा होती है, यह बात दूसरी है कि वह उसका स्पष्ट रूप से प्रतिपादन करता है अथवा नहीं करता। रूसो एक ऐसे विचारक हैं जिन्होंने अपने दार्शनिक विचारों को क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुत नहीं किया है। इनके दार्शनिक विचारों का अनुमान हम इनके आचरण, कथन और लेखों से ही लगाते हैं। इनके आचरण, कथनों और लेखों में भी बड़ी विविधता है, ये कहीं आदर्शवादी नजर आते हैं तो कहीं प्रकृतिवादी।

रूसो ईश्वर में विश्वास करते थे, मानव को जन्म से शुद्ध मानते थे और राज्य की आवश्यकता स्वीकार करते थे। ये तीनों विचार आदर्शवादी विचार हैं। इस दृष्टि से इन्हें आदर्शवादी विचारक कहा जाता है। राजनीतिशास्त्र के विद्वान तो इन्हें आदर्शवादियों का जनक मानते हैं। परन्तु मानव जीवन को सुखमय बनाने सम्बन्धी इनके विचार पूर्णरूपेण प्रकृतिवादी हैं। ये मानव जीवन के किसी अन्तिम उद्देश्य में विश्वास नहीं करते थे, ये तो उसे इसी जीवन के लिए तैयार करने पर बल देते थे। इस सम्बन्ध में इनके विचार बड़े क्रान्तिकारी हैं। इनके अनुसार प्रत्येक मनुष्य का अपना व्यक्तित्व होता है, उसकी अपनी रुचियाँ होती हैं और अपनी आवश्यकताएँ होती हैं। सभी मनुष्य जन्म से स्वतन्त्र पैदा होते हैं और स्वतन्त्र रहना चाहते हैं। परन्तु समाज उन्हें स्वतन्त्र नहीं रहने देता और अपने नियमों के बन्धन में बाँधता है। इनके अपने विचार में ये सामाजिक बन्धन ही हमारे अन्दर बुराई पैदा करते हैं। यही कारण है कि रूसो मनुष्य को सामाजिक बन्धनों से मुक्त कर उसके स्वतन्त्र विकास की बात करते थे। अपने समय के समाज से ये इतने दुःखी थे कि इन्होंने अपनी सारी शक्ति उसके विरोध में लगा दी। विरोध में ये इतने आगे बढ़ गए कि इन्होंने सभ्यता, संस्कृति, नैतिकता और धर्म सभी को निरर्थक कह डाला। इतना ही नहीं अपितु इनको ही मानव जीवन के कष्टों का कारण बताया। विरोध की बौखलाहट में ये यह भी भूल गए कि मानव की

यह सभ्यता और संस्कृति उसकी युग-युग की साधना का परिणाम है और [illegible] एवं धर्म मानव जीवन के आधार हैं। परन्तु उस समय इनका इस प्रकार सोचना स्वाभाविक था। उस समय यूरोप भर में धर्म के नाम पर भोली जनता का शोषण हो रहा था, धर्म और राज्य के ठेकेदार अपने को ही ईश्वर समझते थे और अपने हित के लिए व्यक्ति के हितों का शोषण करते थे। रूसो स्वयं इसका शिकार हुए थे।

रूसो मनुष्य की प्रकृति को शुद्ध मानते थे। इनके अनुसार मनुष्य की प्रकृति एक-दूसरे से प्रेम करने, सहयोग करने और सरल एवं सुखमय जीवन व्यतीत करने की होती है लेकिन सभ्यता के शिकंजे में वह झूठ, फरेब, मक्कारी और शोषण करना सीख जाता है। सभ्यता को रूसो ज्ञान और विज्ञान की उपज मानते थे इसलिए इन्होंने ज्ञान और विज्ञान का भी विरोध किया। इन्होंने अनुभव किया कि बुद्धिमान लोग सरल एवं स्वच्छ प्रकृति वाले लोगों का शोषण करते हैं इसलिए इन्होंने अपने युग के एक दूसरे क्रान्तिकारी विचारक वाल्टेयर के विवेकवाद अथवा बुद्धिवाद का भी विरोध किया और उसके स्थान पर हृदयवाद का नारा बुलन्द किया। इनका तर्क था कि मनुष्य की प्राकृतिक प्रकृति श्रेष्ठतम है इसलिए हमें बुद्धि के स्थान पर भावना का ही विकास करना चाहिए। इन्होंने नारा दिया— 'प्रकृति की ओर लौटो'। प्रकृति की ओर लौटने से इनका तात्पर्य बर्बरता की ओर लौटने से नहीं था अपितु कृत्रिम व्यवहार (सभ्यता) से स्वाभाविक व्यवहार (प्राकृतिक व्यवहार) की ओर लौटने से था। रूसो के अपने इन्हीं विचारों के आधार पर इनके दर्शन की तत्त्व मीमांसा, ज्ञान मीमांसा और आचार मीमांसा देखी-समझी जा सकती है।

रूसो के दार्शनिक चिन्तन की तत्त्व मीमांसा

यूँ रूसो ने न तो इस ब्रह्माण्ड की रचना के बारे में कुछ लिखा है और न कहीं आत्मा-परमात्मा की व्याख्या की है, पर थे ये ईश्वरवादी। ये आत्मा-परमात्मा के अस्तित्व को स्वीकार करते थे परन्तु स्वर्ग के ठेकेदार पादरियों का विरोध करते थे। सचमुच उस समय यूरोप-भर में पादरी धर्म के नाम पर भोली जनता का बेहद शोषण कर रहे थे। रूसो की अपनी धारणा थी कि ईश्वर ने इस वस्तुजगत की रचना बहुत सोच समझकर की है और इसकी प्रत्येक वस्तु अपने में शुद्ध है, मनुष्य भी, अतः उसे अपनी प्रकृति के अनुसार ही जीने देना चाहिए।

रूसो के दार्शनिक चिन्तन की ज्ञान मीमांसा

रूसो के अनुसार प्रकृति का ज्ञान ही सच्चा ज्ञान है। प्रकृति शब्द का प्रयोग रूसो ने कई रूपों में किया है— एक उसके लिए जो मनुष्य के प्रयत्न बिना निर्मित है और दूसरी वह जो मनुष्य ने अपने जन्म से पाई है और जिसके साथ मनुष्य ने कोई छेड़-छाड़ नहीं की है। रूसो ने संसार के सभी दुःखों का कारण तत्कालीन सभ्यता और विज्ञान को बताया इसलिए ये इसके ज्ञान को आवश्यक नहीं मानते थे। आगे चलकर इन्होंने आदर्श राज्य का पूरा खाका तैयार किया और मनुष्य की पूरी शिक्षा योजना तैयार की और शिक्षा द्वारा मनुष्य को वह सब सिखाने पर बल दिया जो मनुष्य के लिए समग्र रूप से हितकर है। ज्ञान प्राप्ति के साधन एवं विधियों के विषय में रूसो का स्पष्ट मत है कि बच्चों को कर्मेन्द्रियों द्वारा करके और ज्ञानेन्द्रियों द्वारा स्वयं के अनुभव से सीखने दो, ज्ञान बाहर से जबरन लादने की वस्तु नहीं, स्वयं करके स्वयं के अनुभव से प्राप्त करने की वस्तु है।